IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 5, Issue 3, January 2025

योगशास्त्र में समाधि विमर्श

प्रो.(डॉ.) गोविन्द प्रसाद मिश्र
प्रोफ़ेसर एवं विभागाध्यक्ष – दर्शनशास्त्र विभाग
IGNTU (केन्द्रीय विश्वविद्यालय), अमरकंटक, म.प्र.
डॉ. नीलम मिश्रा
असिस्टेंट प्रोफ़ेसर,
एस. डी. महाविद्यालय (दी.द.उ.गो.वि.वि.) गोरखपुर, उ.प्र.
drgovindmishra@gmail.com and drneelammishra75@gmail.com

शोध सार

भारतीय दर्शन में द्वैतवादियों ने सृष्टि में मूल तत्त्व दो प्रकार के माने हैं, पहला- जड़ तत्त्व और दूसरा चेतन तत्त्व | दैनिक अनुभव भी जड़ पदार्थों और चेतन तत्त्व की सत्ता की अनुभूति कराते हैं | इन्ही दोनों तत्वों के अनुसंधान पर आधारित दो मुख्य शास्त्र हैं- भौतिक विज्ञान और आध्यात्म विज्ञान | भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में जहाँ वाह्य प्रयोगशाला में शोध कार्य होते हैं वही चेतना का शास्त्र अध्यात्म के क्षेत्र में अन्तःकरण को ही प्रयोगशाला बनाकर सत्यान्वेषण किया जाता है और यह आध्यात्मिक शोध प्रक्रिया योग साधना कहलाती है जिसमें साधक समाधि के चरण में पहुँचकर जीवन व जगत के सूक्ष्म रहस्यों, अलौकिक सत्यों एवं स्वयं के वास्तविक स्वरूप से परिचित होता है तथा जीवन के अंतिम लक्ष्य परम पुरुषार्थ 'कैवल्य' को प्राप्त करता है।

समाधि योग साधना का महत्त्वपूर्ण लक्ष्य है। समाधि की अवस्था में ही योग का उद्देश्य पूर्ण होता है। प्रायः समाधि को योग का पर्याय माना जाता है। महर्षि व्यास ने भी अपने योग भाष्य में कहा है कि- समाधि ही योग है- योगः समाधिः[1]। शब्द व्युत्पत्ति की दृष्टि से समाधि शब्द संस्कृत भाषा के सम और आ उपसर्ग पूर्वक धा धातु से क्तिन प्रत्यय करने पर बना है जिस का अर्थ होता है एकाग्रता, एकाग्र करना, ध्यान की पराकाष्ठा, योग की अंतिम स्थिति, आत्म साक्षात्कार की स्थिति, जीवात्मा परमात्मा के मिलन की अवस्था आदि । ध्यान की परिपक्व अवस्था का नाम ही समाधि है। ध्यान का अभ्यास दीर्घ काल तक करते रहने पर जब उसमें परिपूर्णता आ जाती है तब वही ध्यान समाधि के रूप में परिणत हो जाता है। अतः ध्यान के बाद समाधि की अवस्था आती है। वस्तुतः समाधि ध्यान की ही अगली एवं पूर्ण अवस्था है।

वस्तुतः ध्येय वस्तु में चित्त की विक्षेप रहित एकाग्रता को समाधि कहते हैं । चित्त की समस्त वृत्तियों के निरोध होने पर चित्त की स्थिर और उत्कृष्ट अवस्था का नाम समाधि है- 'समाधीयते चित्तमन्नेनोति

[1] पातंजल योग सूत्र. व्यास भाष्य **1/1**

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 5, Issue 3, January 2025

समाधिः'। राजमार्तण्डवृत्ति में भोज राज कहते हैं कि "सम्यग आधीयते एकाग्रीक्रियते विक्षेपान् परिहृत्य मनोयत्र स समाधिः' अर्थात जिसमें मन विक्षेपों से हटाकर एकाग्र किया जाता है वह समाधि है | विद्यारण्य स्वामी के अनुसार निर्वात स्थान में रखे दीपक की लौ के समान चंचलता से रहित चित्त की निश्चल अवस्था का नाम ही समाधि है- "निर्वात द्वीप वच्चित्तं समाधिः अभिधियते "।

विष्णु पुराण में कहा गया है कि- तस्यैव कल्पनाहीनं स्वरूपग्रहणं हि यत्। मनसा ध्यानं निष्पाद्यं समाधिः सोऽभिधीयते।।[2] अर्थात्- ध्यान के कल्पनाहीन स्वरूप को ग्रहण करना तथा मन के द्वारा ध्यान की चरम अवस्था को प्राप्त होना ही समाधि है। अपरोक्षानुभूति के अनुसार - निर्विकार तथा ब्रह्मकार वृत्ति से जो पूर्णतया वृत्तिहीनता हो जाती है वही ज्ञान समाधि है - निर्विकारतया वृत्त्या ब्रह्माकार तथा पुनः। वृत्तिविस्मरणं सम्यक् समाधिरुज्ञान संज्ञकः।।[3]

समाधि के विषय में महर्षि दयानन्द सरस्वती का कहना है कि जैसे अग्नि के बीच में लोहा भी अग्नि रूप हो जाता है, उसी प्रकार परमेश्वर के ज्ञान में प्रकाशमय होकर अपने शरीर को भी भूले हुए के समान जान के आत्मा के परमेश्वर के प्रकाश स्वरूप आनन्द और ज्ञान से परिपूर्ण करने को 'समाधि' कहते हैं।[4] योग याज्ञवल्क्य में जीवात्मा और परमात्मा की समान या समता अवस्था को समाधि कहा गया है- समाधि: समतावस्था जीवात्मपरमात्मनोः।[5]

उपनिषदों में समाधि को आत्मा परमात्मा के मिलन की अवस्था कहा गया है। यथा जाबालदर्शनोपनिषद के अनुसार- जीवात्मा और परमात्मा के ज्ञान के उदय को समाधि कहते हैं।[6] अन्नपूर्णोपनिषद भी उपर्युक्त कथन से सहमत है उसके अनुसार समाधि संशय एवं आसक्ति से रहित आत्मपूर्णता की अवस्था है।[7]

सौभाग्यलक्ष्म्युपनिषद कहता है कि- जीवात्मा की परमात्मा के साथ एकता ही समाधि है जिसमें संकल्प-विकल्प की सारी क्रियाएं नष्ट हो जाती हैं।[8] मुक्तिकोपनिषद में समाधि संकल्प शून्य आत्म ज्ञान की अवस्था है। उसके अनुसार- "यह समाधि उस संकल्प शून्य अवस्था का नाम है जिसमें न मन की क्रिया है

---

[2] **विष्णु पुराण-6/7/92**

[3] **अपरोक्षानुभूति-124**

[4] **ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका**

[5] योग याज्ञवल्क्य- **10/2**

[6] जाबालदर्शनोपनिषद **10/1**

[7] अन्नपूर्णोपनिषद-**5/75**

[8] सौभाग्य लक्षयुपनिषद-**16**

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 5, Issue 3, January 2025

और न ही बुद्धि का व्यापार। यह आत्मज्ञान की अवस्था है और इसमें उस प्रत्यक् चैतन्य (आत्म चेतना) के अतिरिक्त सबका बाध (अभाव) है।"[9] शाण्डिल्योपनिषद का मत है कि जीवात्मा और परमात्मा की एकता की वह अवस्था जिसमें ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय रूप त्रिपुटी का अभाव है, जो परमानन्द रूपा है और शुद्ध चैतन्यात्मिका है, वही समाधि है। [10] तेजोबिन्दूपनिषद के अनुसार- ब्रह्माकार वृत्ति के द्वारा अथवा सर्वसंकल्प निवृत्ति के द्वारा चित्त की वृत्तियांे को सर्वथा भूल जाने का नाम ही 'समाधि' है।[11]

महर्षि घेरण्ड के अनुसार शरीर से मन को भिन्न करके परमात्मा में लगाने पर समाधि होता है | समाधि में अपने नित्य मुक्त शोक-दुख रहित सच्चिदानन्द स्वरूप ब्रह्म रूप का बोध हो जाता है। इसके लिए विद्या, गुरु और आत्मा की प्रतीति के साथ मन का प्रबोध आवश्यक है | [12] महर्षि पतंजलि ने अपने योगसूत्र ग्रन्थ में समाधि का लक्षण बताते हुए कहा है कि- तदेव अर्थ मात्र निर्भासं स्वरूप शून्यमिव समाधिः।।[13] अर्थात् ध्यान करते करते जब चित्त ध्येयाकार के रूप में परिणत हो जाता है और अपने स्वरूप का ज्ञान शून्य (अभाव, लुप्त) सा हो जाय तथा उस समय ध्येय से भिन्न कोई भी वस्तु प्रतीत न हो तो (ध्यान की) वही अवस्था समाधि कहलाती है। योगभाष्यकार व्यास का भी कथन है- ध्यानमेव ध्येयाकार निर्भासं प्रत्ययात्मकेन स्वरूपेण शून्यमिव यदा भवति ध्येयस्वभावावेषा तदा समाधिरित्युच्यते। [14] अर्थात् जिस काल में ध्यान केवल ध्येयकार होकर निरन्तर शसित होता है एवं ध्येय का स्वरूप हो जाने से चित्तवृत्त्यात्मक ध्यान स्वरूप शून्य के समान हो जाता है, उस समय वही ध्यान समाधि के नाम से कहा जाता है।

हठयोग प्रदीपिका की मान्यता है कि जीवात्मा और परमात्मा दोनों के एकत्व से सभी प्रकार के संकल्पों का नष्ट हो जाना भी समाधि कहलाता है- तत्समं च द्वयोरैक्यं जीवात्मा परमात्मनोः।

प्रनष्ट सर्वसंकल्पः समाधिः सोऽमिधीयते।। [15] विवेकचूड़ामणि में ब्रह्मसूत्र भाष्यकार श्री शंकराचार्य जी कहते हैं- समाधि से समस्त वासना रूप ग्रन्थि का विनाश और अखिल कर्मो का नाश होकर भीतर बाहर सर्वत्र एवं सर्वदा बिना यत्न किये ही स्वरूप की विस्फूर्ति होने लगती है। [16]

---

[9] मुक्तिकोपनिषद-**2/55**

[10] शाण्डिल्योपनिषद-**1/11**

[11] तेजोबिन्दूपनिषद **1/37**

[12] घेरण्ड संहिता-**7/2-4**

[13] योग सूत्र **3/3**

[14] व्यास भाष्य **3/3**

[15] हठयोग प्रदीपिका **4/5-7**

[16] विवेक चूड़ामणि-**364**

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 5, Issue 3, January 2025

योग दर्शन में समाधि मूलतः दो प्रकार की मानी गई है- सम्प्रज्ञात समाधि और असम्प्रज्ञात समाधि। सम्प्रज्ञात समाधि को सबीज समाधि एवं असम्प्रज्ञात समाधि को निर्बीज समाधि भी कहते हैं।सम्प्रज्ञात समाधि में केवल ध्येय विषय का ही ज्ञान होता है तथा ध्येय विषय के अतिरिक्त अन्य विषयों का अभाव हो जाता है। महर्षि पंतजलि के शब्दों में- क्षीण वृत्तेः अभिजातस्य इव मणेः ग्रहण ग्राह्वे'ाु तत् स्थतंजनता समापत्तिः। [17] अर्थात् ध्यान आदि साधनाओं का अभ्यास करते-करते जब साधक का चित्त स्वच्छ स्फटिक मणि की भाँति अति निर्मल हो जाता है तथा जब उसकी ध्येय विषय के अतिरिक्त अन्य वाह्य वृत्तियाँ शान्त हो जाती है उस समय साधक ग्रहीता (पुरुष) ग्रहण (अन्तःकरण और इन्द्रियाँ) तथा ग्राहय (पंचभूत आदि इन्द्रिय विषय), इनमें जिस किसी पर भी ध्येय का लक्ष्य बनाकर उसमें अपने चित्त को लगाता है तो वह चित्त उस ध्येय वस्तु में स्थित होकर तदाकार हो जाती है- (तदस्थतदंजनता)। इसी को सम्प्रज्ञात समाधि (समपत्ति) कहते हैं | समाधि की इस अवस्था में साधक को ध्येय वस्तु के स्वरूप का स्पष्ट ज्ञान हो जाता है, उसके विषय में किसी प्रकार का संशय या भ्रम नहीं रहता।

सम्प्रज्ञात समाधि के प्रकारः-

सम्प्रज्ञात समाधि में ध्यान का विषय क्रमशः स्थूल से सूक्ष्म, अतिसूक्ष्म की ओर होता है। स्थूल पदार्थों के साक्षात्कार एवं उनके स्वरूप को जानने के बाद क्रमशः विषयों के साक्षात्कार करने, उनके स्वरूप को जानने में समर्थ होता जाता है। इन्ही स्थूल सूक्ष्म आदि ध्येय विषयों की भिन्नता के आधार पर सम्प्रज्ञात समाधि चार प्रकार की बताई गई है- "वितर्क विचारानन्दास्मितानुगमात् सम्प्रज्ञातः" [18] अर्थात् सम्प्रज्ञात समाधि चार तरह की है-

1 वितर्कानुगत् या सवितर्क समाधि

2 विचारानुगत् या सविचार समाधि

3 आनन्दानुगत् या सानन्द समाधि

4 अस्मितानुगत् या सास्मित समाधि

[17] योग सूत्र **1/41**

[18] योग सूत्र **1/17**

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 5, Issue 3, January 2025

उपर्युक्त चारों सम्प्रज्ञात समाधियों को पतंजलि ने सबीज समाधि कहा है। " ता एव सबीजः समाधिः।" [19] शब्द, अर्थ और ज्ञान के विकल्प की दृष्टि से भी समाधि के दो प्रकार हैं- सवितर्क समाधि और निर्वितर्क समाधि।

वितर्कानुगत समाधि में जब तक शब्द अर्थ और ज्ञान का विकल्प वर्तमान रहता है अर्थात योगी के चित्त में ध्येय स्थूल विषय के स्वरूप के साथ-साथ उसके नाम और प्रतीति की भी अनुभव रहता है, तब तक वह सवितर्क समाधि कहलाती है- तत्र शब्दार्थ ज्ञानविकल्पैः संकीर्णा सवितर्का समापत्तिः। [20] और जब इनका विकल्प नहीं रहता तो समाधि की वह अवस्था निर्वितर्क समाधि कहलाती है- स्मृतिपरिशुद्धौ स्वरूप शून्यमेवार्थमात्र निर्भासा निर्वितर्का। [21] सवितर्क समाधि को सविकल्पक समाधि तथा निर्वितर्क समाधि को निर्विकल्पक समाधि भी कहते है क्योंकि इसमें सभी प्रकार के विकल्पों का अभाव हो जाता है। निर्वितर्क और निर्विचार समाधियाँ निर्विकल्प होने पर भी निर्बीज नही हैं, ये सभी सबीज समाधि ही है क्योंकि इनमें बीज रूप से किसी न किसी ध्येय पदार्थ का अस्तित्व ध्येय वृत्ति के रूप में रहता है।

असम्प्रज्ञात समाधि या निर्बीज समाधिः- यह समाधि की सर्वोच्च अवस्था है। इसमें चित्त की सम्पूर्ण वृत्तियाँ निरूद्ध हो जाती हैं इसीलिए इसे निर्बीज समाधि भी कहते हंै। इस अवस्था में चित्त में कोई भी आलम्बन (ध्यान का विषय) नहीं होता। इसमें परम वैराग्य की स्थिति होती है। योगी को संसार की किसी भी वस्तु में माया ममता नहीं रहती। इस की पूर्व अवस्था में केवल शुद्ध संस्कार ही शेष बचे रहते हैं -..संस्कारशेषो अन्यः। [22] और इन संस्कारों के भी निरोध हो जाने पर संस्कार के बीज का सर्वथा अभाव हो जाने से निर्बीज समाधि हो जाती है- तस्यापि निरोधे सर्व निरोधात् निर्बीजः समाधि। [23]

जिस प्रकार अग्नि ईधन को जलाकर स्वयं भी शान्त हो जाती है, उसी प्रकार असम्प्रज्ञात समाधि में ऋतम्भरा प्रज्ञा उदय होकर अविद्या, वृत्ति एवं संस्कार को भस्म करके स्वयं भी उपशान्त हो जाती है। उस समय विशुद्ध चैतन्य मात्र रहता है जो द्रष्टा पुरुष का स्वरूप है यही पुरुष का कैवल्य या मोक्ष है जो योग का उद्देश्य था। असम्प्रज्ञात समाधि ही योग का लक्ष्य है और सम्प्रज्ञात समाधि इस लक्ष्य तक पहुँचने की सीढ़ी है। इसमें ध्येय आलम्बन वृत्ति भी मौजूद होती है इसीलिए इसे सबीज समाधि कहा गया है जबकि असम्प्रज्ञात को निर्बीज समाधि।

---

[19] योग सूत्र **1/46**

[20] योग सूत्र **1/42**

[21] योग सूत्र **1/43**

[22] योग सूत्र **1/18**

[23] योग सूत्र **1/51**

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 5, Issue 3, January 2025

सम्प्रज्ञात समाधि में चित्त की निर्मलता से ऋतम्भरा प्रज्ञा का उदय होता है जिससे विवेक ख्याति द्वारा अविद्या आदि क्लेश का नाश होता है और योगी धर्ममेध समाधि से होते हुए निर्बीज समाधि को प्राप्त करता है, जो कैवल्य की अवस्था है, जीवन का परम पुरुषार्थ और योग का अंतिम लक्ष्य है।